भारतीय नारी को स्वयं अपने पति का विश्वास अर्जित करने में भी कितनी मर्मान्तक पीड़ा के दौर से गुजरना पड़ता है और जिन्दगी की इस जद्दोजहद में वह किस प्रकार उपहास की पात्र बनकर आजीवन तड़पती है, इस तथ्य को कवि ने अपनी कविता अहल्या में शब्दांकित किया है। अहल्या अनिन्दय सौंदर्य ही उसके जीवन में कडुवाहट पैदा करने वाला तत्व सिद्ध होता है–

नाहक ही
उतना अधिक रूप दिया
विधाता ने
गौतम की शकल बना के
सचमुच क्या इन्द्र ही आया था?
समान आकृति वाले
दो पुरूषों की छाया में पथरा गई बेचारी!

संदर्भ सूचिः–

1. ऋतुराज वसन्त
2. तलाब की मछलियाऋतुराज वसन्त
3. तलाब की मछलियाँ
4. कविता–अहल्या
5. विश्वम्भर नाथ मानव नयी कविता नये कवि

****

भारतीय–दर्शन और विज्ञान भिक्षु

डॉ0 अशोक कुमार*

सांख्य, योग व वेदान्त दर्शनों के मूल ग्रन्थों पर भाष्य एवं टीकाएँ अनेक मौलिक दार्शनिक रचनाओं के प्रणयन में विज्ञानभिक्षु का ऐतिहासिक योगदान है। विज्ञानभिक्षु ने वेदान्त, सांख्य और योग समन्वीयमान दर्शनों पर भाष्य या वार्तिक लिखा है और तीनों दर्शनों में पूर्ण आत्मीयता तथा अनुभूति की दृष्टि रखी है। तीनों दर्शनों के लिए उन्होंने अनेक स्थलों पर 'अस्माच्छास्त्रे', 'अस्मन्मते', 'स्वाशास्त्रे'[1] इत्यादि पदों से अभिहित किया है। तीनों शास्त्र उनके अपने हैं। तीनों उनके लिए प्रधान है। उनका मूल विश्वास यह है कि जिन ऋषियों ने श्रुतियों के आधार पर तथ्यों का प्रतिपादन किया है वे सभी दिव्य दृष्टि वाले तथा ऋतम्भराप्रज्ञापूर्ण थे। अतः उनकी बातें न तो भ्रान्त हो सकती है और न ही परस्पर विरोधिनी। उनकी यही निष्ठा उनके समन्वय–सिद्धान्त की बीज–मन्त्र है। इन शास्त्रों के सिद्धान्त आपाततः परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं। पूर्ववर्ती प्रथित व्याख्याताओं ने सांख्य, योग और वेदान्त के मतभेदों को और अधिक बढ़ा–चढ़ा कर प्रतिपादित भी किया था। इस समस्या का समाधान सर्वप्रथम उन्होंने सांख्यप्रवचनभाष्य की प्रारम्भिक पंक्तियों में कर देना नितान्त उचित समझा और बड़ी सुरुचिपूर्ण शैली में तीनों शास्त्राों का विशेष रूप में और सभी आज्ञितक शास्त्रों का सामान्य रूप से अविरोध प्रतिपादित किया है।[2]

विज्ञानभिक्षु का कहना है कि तीनों शास्त्रों के प्रतिपाद्य विषय भिन्न–भिन्न हैं। यद्यपि तीनों शास्त्रों का स्तर पारमार्थिक है फिर भी पारमार्थिक स्तर पर ही विषय–भेद है। उनके मत में न्याय, वैशेषिक (मीमांसा भी) व्यावहारिक स्तर के विषयों का तत्वज्ञान उपस्थित करते हैं इसलिए पारमार्थिक स्तर वाले सांख्य, योग और वेदान्त से उनका न तो कोई विशेष है, न पुनरुक्ति है और न ही न्यायादिकों की अप्रामाणिकता है[3] क्योंकि 'यत्परः शब्दः स शब्दार्थः' यह विषय है। प्रत्येक शास्त्र में जो गौण विषय है उनके सम्बन्ध में तीनों शास्त्रों के भी मतभेद हैं। विज्ञानभिक्षु ने उनका स्पष्ट उल्लेख उचित अवसरों पर निस्सदेह किया है, किन्तु उन आंशिक मतभेदों के कारण समूचे शास्त्र से विरोध मानना उन्हें स्वीकार नहीं है। जो सांख्य की निरीश्वरता और सांख्य योग का स्वतंष–प्रधान–कारणातावाद आदि सिद्धान्त

***काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी–05**

योग और वेदान्त से विरुद्ध है, उन अंशों को विज्ञानभिक्षु ने त्याज्य बनाया है और उन अंशों में सांख्य को उन्होंने दुर्बल भी कहा है। अतः आँख मूँद कर उन्होंने समन्वय नहीं किया। अपितु त्याज्य अंशों का परिहार करते हुए उन्होंने तीनों शास्त्रों का मौलिक सामंजस्य प्रदर्शित किया है। अतः व्यावहारिक तत्व ज्ञान में न्यायादि की प्रामाणिकता अक्षुण्ण और संदेहातीत है।[4] पारमार्थिक स्तर के दर्शनों के प्रतीयमान विरोधों के सम्बन्धों में विज्ञानभिक्षु का मत है कि वेदान्त में प्रधान–विषय 'ईश्वर अथवा ब्रह्म' है[5], सांख्य का मुख्य विषय 'प्रकृतिपुरुषविवेक[6]' है और योग का प्रधान विषय प्रकृतिपुरुषविवेक को उत्पन्न करने वाला तथा उससे उत्पन्न होने वाला 'द्विविध–योग[7]' इन तीनों में से प्रत्येक शास्त्र के इन प्रधान प्रतिपाद्य विषयों की पारमार्थिक पृष्ठभूमि में वे तत्व गौण रूप में आ ही जाते हैं जिनका विवेचन तदतिरिक्त दो शास्त्रों में प्रधान तत्व के रूप में हुआ होता है।

विज्ञानभिक्षु की परिचायक पृष्ठभूमि अन्धकारमय है। उन्होंने अपनी रचनाओं में अपना नाम, स्थान एवं समय के विषय में किसी प्रकार की सूचना नहीं दर्शायी है। न ही अपने गुरुपरम्परा का ही उल्लेख किया है। 'विज्ञानभिक्षु' को प्रतीक रूप में ग्रहण किया जाता है जो 'विज्ञानयति', 'विज्ञानार्क' व 'विज्ञानाचार्य' आदि रूपों में यत्र–तत्र मिलता है।[8] 'उपदेशरम्नूजा' व 'सांख्यसार' में उन्होंने स्वयं का मात्र 'विज्ञान' नाम से उल्लेख किया है।[9] उनके प्रमुख शिष्य भावागणेश ने 'तत्त्वयाथार्थ्यदीपनम्' नामक 'तत्त्वसमाससूत्र' की अपनी टीका के मंगलाचरण में अपने गुरु के रूप में विज्ञानभिक्षु को सादर नमन किया है। जहाँ उन्होंने विज्ञानभिक्षु को सादर 'विज्ञानाचार्य' के रूप में दर्शाया है।[10]

विज्ञानभिक्षु के जन्मस्थान का रहस्य भी काफी उलझा हुआ है। उनके भाषागत प्रयोगों के माध्यम से उन्हें उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार या मध्य प्रदेश में से किसी एक प्रदेश में उनका जन्मस्थान माना जाता है। आचार्य के जन्मस्थान के रूप में उत्तर भारत की प्रमुखता से ग्रहण किया जाता है क्योंकि उनके द्वारा किये गये राज्य–व्यवस्था सम्बन्धी संकेत भी उन्हें उत्तर भारत का सिद्ध करते हैं।[11] विचिष अन्तरंग साध्यों से यह सिद्ध किया गया है कि प्रयाग ही आचार्य का साधना क्षेष था।[13] आचार्य के प्रिय शिष्य भावागणेश भी काशी के निवासी थे।[14] उनके द्वारा 'देशों जन्मभूमिनगरादिः' के उल्लेख से विज्ञानभिक्षु का जन्म किसी ऐसे नगर में हुआ था, जहाँ बड़ी–बड़ी सड़कें थीं। किसी राजघराने का महल भी था। वहाँ इन लोगों का आना–जाना भी था। राजकुल में इन लोगों की प्रतिष्ठा थी। वहाँ ये लोग साफ–सुथरे पकड़े पहन कर ही जाना पसंद करते थे।[15] विज्ञानभिक्षु एक संसार त्याग निःस्पृह संन्यासी थे। उनके जीवन का एकमात्र ध्येय चरम मुक्ति को प्राप्त करना था। उनकी साधना स्थली के बारे में कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है

फिर भी 'विज्ञानामृतभाष्य', 'योगवार्तिक' व 'सांख्यभाष्य' में प्राप्य प्रमाणों के आधार पर प्रयाग को आचार्य की साधना–स्थली के रूप में ग्रहण किया जाता है।[16]
आचार्य विज्ञानभिक्षु के समय के विषय में भी मतभेद बने हुए हैं, जिसका कारण आचार्य का अपने परिचय के प्रकटीकरण में विरक्त भाव है। अधिकांश विद्वान उन्हें 16वीं शताब्दी का मानते हैं। डॉ0 कीथ[17], एफ0ई0 हाल[18] रिचर्ड गार्व[19], प्रो0 एम0 विटरनित्ज[20], डा0 सुरेन्द्रनाथ दासगुप्ता[21], डॉ0 राधाकृष्णन[22], डॉ0 एम0 हिरियन्ना[23], डॉ0 अणिमासेनगुप्ता[24], आचार्य बलदेव उपाध्याय[25], आचार्य उमेश मिश्र[26], डॉ0 सुधीर कुमार गुप्त[27], पं0 गंगानाथ झा[28] ने भी आचार्य विज्ञानभिक्षु का समय 1350 ई स्वीकार करते हैं। सामान्यतया विज्ञानभिक्षु का समय 15वीं शताब्दी के बाद व 17वीं शताब्दी के पूर्व माना जाता है।

विज्ञानभिक्षु एक प्रकार से सांख्य के अन्तिम आचार्य हैं। 16वीं शताब्दी के प्रथमार्द्ध में ये काशी में ही विद्यमान थे। भिक्षु नाम धारण करने पर भी न तो ये बौद्ध थे न दशनामी सन्यासियों में अन्तर्मुक्त थे। यदि ऐसा होता है तो ये शंकराचार्य के मत की खरी अलोचना से अवश्य विरल होते। ये बड़े स्वतन्ष विचार के सांख्याचार्य थे। इन्होंने उपनिषद् तथा पुराणों के युग के अनन्तर वियुक्त होने वाले सांख्य और वेदान्त में हृदयंगम सामंजस्य दर्शाया है। इन्होंने तीन दर्शनों के ऊपर भाष्यग्रन्थ लिखे हैं– (1) सांख्यप्रवचनभाष्य (सांख्यप्रवचनभाष्य (सांख्यसूत्रों पर) (2) योगवार्त्तिक (व्यासभाष्य पर) (3) विज्ञानामृतभाष्य (ब्रह्मसूत्र पर)। इनके अतिरिक्त 'सांख्यसार' तथा 'योगसार' में इन दर्शनों के सिद्धान्त का संक्षिप्त प्रतिपादन सरल ढंग से किया गया है। इनके शिष्यों में भावागणेश का नाम प्रमुखता से मिलता है जो सांख्य विशेषज्ञ के थे, जैसा कि उनके तत्त्वसंग्रह के विद्वतापूर्ण व्याख्या ग्रन्थ तत्त्वयाथार्थ्यदीपन से पता चलता है। सांख्य–तन्त्र का अध्ययन–अध्यापन दुर्बल हो चला था। इसीलिए इन्होंने सांख्य को 'कालार्कभक्षित' कहा है, परन्तु इस तन्त्र की प्रणाली को पुनः जागृत करने तथा पुनरूज्जीवित करने में जितना श्लाघनीय उद्योग विज्ञानभिक्षु ने किया, वैसा किसी ने नहीं किया। सांख्य–योग को पुनः प्रतिष्ठित करने का सुयश विज्ञानभिक्षु को ही प्राप्त है।

संदर्भ–

1. सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 17; योगसारसंग्रह, पृ0 125, विज्ञानामृतभाष्य, पृ0 73 इत्यादि।
2. तस्मादास्तिकशास्त्रस्य न कस्याप्याप्रामाण्यं विरोधी वा, स्वस्वविषयेषु सर्वेषाम् अबोधात् अविरोधच्चेति। –सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 5
3. न चैतावता न्यायाद्यप्रामाण्यं विविक्षतार्थे देह्याद्यतिरिक्तांशे बाधाभावाद्। –सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 8

4. सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 1।
5. विज्ञानामृतभाष्य, पृ0 33–35।
6. सांख्यशास्त्रस्य तु पुरुषार्थतत्साधन–प्रकृतिपुरुषविवेकावेव मुख्यो विषयः। –सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 4
7. ब्रह्ममीमांसासांख्यादिषु च ज्ञानमेव विचारितं बाहुल्येन ज्ञानसाधनमाषस्तु योगः संक्षेपम्ज्ञानजन्ययोगस्तु संक्षेपतोऽपि तेषु नोक्तोऽतोऽतिविस्तरेणा द्विविधम् योगं प्रतिपिपादषुर्भगवान् पतंजलिः शिष्यावाानायादौयोगानुशासनं शास्षमारम्यतया प्रतिज्ञातवान्। –योगवार्तिक, पृ0 5
8. सांख्यप्रवचनभाष्यम्, पृ0 246; योगसारसंग्रह, पृ0 39; सांख्यसार, पृ0 66, योगवार्तिकम्, पृ0 465; विज्ञानामृतभाष्य, पृ0 344; उद्धृत– डॉ0 सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव ; आचार्य विज्ञानभिक्षु और भारतीय दर्शन में उनका स्थान, पृ0 2।
9. 'ब्रगह्मात्मतत्वविद्येयं' 'विज्ञानेनोपदिश्यते'। –पाण्डुलिपि, उपदेशरत्नमाला सांख्यसार, पृ0 1।
10. तत्वयाज्यार्थ्यदीपनम्, मंगलाचरण।
11. सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 120।
12. सांख्यप्रवचनभाष्य, पृ0 9।
13. भावागणेश दीक्षित सम्बन्धी निर्णय पष (16वीं शताब्दी) काशी में प्राप्त हुआ है। यह निर्णय पत्र बनारस में मुक्तिमण्डप पर लिखा गया था। –पी.के. गोड़े महोदय का लेख, अडियार लाइब्रेरी, फरवरी, 1944
14. डॉ0 सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव : आचार्य विज्ञानभिक्षु और भारतीय दर्शन में उनका स्थान, पृ0 24।
15. विज्ञानामृतभाष्य, पृ0 309; योगवार्तिकम्, पृ0 161; सांख्यप्रवचनभाष्य, 187, 232।
16. सांख्य सिान्त, पृ0 112; डॉ0 कीथ ने अपने एक अन्य ग्रन्थ 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' (पृ0 5/9) में विज्ञानभिक्षु का समय 1650 ई0 माना है।
17. सांख्यसार (भूमिका), पृ0 37।
18. सांख्यसूत्रवृत्ति (भूमिका), पृ0 8।
19. इण्डियन लिटरेचर : डॉ0 विण्टरनित्ज, पृ0 457।
20. हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलॉसफी, वा, 1, पृ. 221।
21. भारतीय दर्शन : डॉ0 राधाकृष्णन, खण्ड–2, पृ0 255।
22. आउटलाइनस ऑफ इण्डियन फिलॉसफी : डॉ0 एम0 हिरियन्ना, पृ0 268

23. एस्से ऑफ सांख्य एण्ड अदर सिस्टम्स ऑफ इण्डियन फिलॉसफी, डॉ0 अणिमासेन गुप्ता, पृ0 73।
24. भारतीय दर्शन : आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 255।
25. भारतीय दर्शन : आचार्य उमेशमिश्र, पृ0 276।
26. भारतीय दर्शन के सम्प्रदाय : डॉ0 सुधीर कुमार गुप्त, पृ0 34।
27. योगसारसंग्रह ऑफ विज्ञानभिक्षु : पं0 गंगानाथ झा, पब्लिशर्स नोट।
28. सांख्य दर्शन का इतिहास : उदयवीर शास्त्री, पृ0 304।

****